CONTENTS

INDEX

TITLE	Page(s)
भारत में शिक्षक की भूमिका: वर्तमान सन्दर्भ में, पूर्व में एवं भविष्य की चुनौतियाँ - **डॉ0 सुष्मिता पन्त**	**02**
उच्च प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन - **ज्योति पुंडीर**	**20**
Importance of Moral Values in Education in Present Day Life – **Mr. Rakesh Kumar Keshari, Dr. Shivpal Singh**	**30**
Domestic violence against women in India - **Saba Hashmi**	**37**
A Study on Motivation of Underachiever High School Students for Academic Performance -**Mr. Manoj Kumar**	**43**

DVSIJMR
ISSN NO 2454-7522

"भारत में शिक्षक की भूमिका: वर्तमान सन्दर्भ में,पूर्व में एवं भविष्य की चुनौतियाँ"

डॉ0 सुष्मिता पन्त
असि0प्रो0 इतिहास विभाग
बी0एस0एम0 पी0जी0कॉलेज,रूड़की (हरिद्वार)

"शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक तथा मनुष्य में निहित शारीरिक मानसिक एवं आत्मिक श्रेष्ठ शक्तियों का सर्वांगीण विकास है।"

गाँधी जी ने दूसरी जगह को 'सा विद्या या विमुक्तये'(शिक्षा वह है जो मुक्ति दिलाये) के रूप में परिभाषित किया है।

'महात्मां गाँधी'द्वारा कथित

प्रस्तावना

शिक्षक समाज का दर्पण होता है। एक शिक्षक को समाज के सम्मुख एक आदर्श चरित्र प्रस्तुत करना होता है जिससे उसके छात्र-छात्राएं एक आदर्श के रूप में अपने शिक्षक को लेके चले। भारतीय संस्कृति का एक सूत्र वाक्य प्रचलित है 'तमसो मा ज्योतिर्गमय'इसका अर्थ है अंधेरे से उजाले की ओर जाना इस प्रक्रिया को वास्तविक अर्थों में पूरा करने के लिए शिक्षा,शिक्षक और संस्कृति के मामले में प्राचीनकाल से ही बहुत समृद्ध रहा है। भारतीय समाज में शिक्षा को शरीर,मन और आत्मा के विकास का साधन माना गया है। वहीं शिक्षक को समाज के समग्र व्यक्तित्व के विकास का उत्तरादायित्व सौंपा गया है।

शिक्षक का जीवन आदर्श एवं उसका आदर्श चरित्र होना चाहिए- क्योंकि छात्र उसके जीवन से अधिक सीखते हैं बजाय उसके भाषणों के।

गाँधी जी ने लिखा है कि-"मुझे लगा कि लड़के पुस्तकों एवं वाख्यानों की अपेक्षा शिक्षकों के जीवन से अधिक सीखते है। उस शिक्षक को धिक्कार है जो मुँह से एक बात है तथा जीवन में भिन्न प्रकार से व्यवहार करता है।"

भारतीय शिक्षा का इतिहास भारतीय सभ्यता का भी इतिहास है। भारतीय समाज के विकास और उसमें होने वाले परिवर्तनों की रूपरेखा में हम शिक्षक के स्थान और उसकी भूमिका को भी निरंतर विकासशील पाते है। महर्षि अरविन्द ने एक बार शिक्षकों के सम्बन्ध में कहा था कि "शिक्षण राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होतें है। वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते है और उन्हें अपने श्रम से सींचकर उन्हें शक्ति में निर्मित करते है।" महर्षि अरविन्द का मानना था कि किसी राष्ट्र के वास्तविक निर्माता उस देश के शिक्षक होते है। इस प्रकार एक विकसित, समृद्ध एवं हर्षित राष्ट्र व विश्व के निर्माण में शिक्षकों की भूमिका ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण होती है।

हमारा वर्तमान समाज एवं राष्ट्र परिवर्तन व विकास के एक नाजुक परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण दौर से गुजर रहा है। ऐसी परिस्थिति में अध्यापक का उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। अध्यापक ही देश के भावी नागरिकों अर्थात् युवावर्ग के छात्र-छात्राओं के वास्तविक सम्पर्क में आता है तथा उन्हें अपने आचार-विचार तथा ज्ञान के अवबोध से प्रभावित करता है। अध्यापकों के ऊपर ही राष्ट्र के भावी निर्माताओं को तैयार करने का दायित्व होता है। सामाजिक तथा राष्ट्रीय विकास का सूत्रधार अध्यापक ही होता है। समाज की आवश्यकताओं, अपेक्षाओं, आकांक्षाओं, आदर्शों, मूल्यों आदि को वास्तविक रूप देने की जिम्मेदारी भी अध्यापकों को वहन करनी होती है। वास्तव में अध्यापकगण अपने प्रयासों से भावी समाज की संरचना करते है। इसलिए अध्यापकों को सामाजिक अभियन्ता (Social Engineer) से भी सम्बोधित किया जाता है। राष्ट्रीय विकास में अध्यापकों के योगदान को देखते हुए अध्यापक को राष्ट्र निर्माता भी कहा जाता है।

शिक्षा प्रक्रिया के तीन प्रमुख अंगों अध्यापक छात्र व पाठ्यवस्तु में अध्यापक का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। श्रेष्ठ अध्यापकों के अभाव में सुयोग्य छात्रगण भी वांछित ज्ञानार्जन में सफल नहीं हो सकते है। अच्छी से अच्छी पाठ्यवस्तु भी निपुण

अध्यापकों की अनुपस्थिति में प्राणहीन हो जाती है। अध्यापकगण शिक्षा प्रक्रिया को उचित दिशा प्रदान करते है। अच्छे अध्यापक छात्रों को वांछित व्यवहार परिवर्तन में सहायता प्रदान करते है तथा उनको सर्वांगीण विकास के पथ पर सफलतापूर्वक आगे बढ़ने में सहायक सिद्ध होते है। शिक्षा व्यवस्था किसी भी प्रकार की क्यों न हो उसमें अध्यापक की भूमिका सर्वोपरि होती है। अध्यापक शिक्षा प्रणाली का केन्द्र होता है तथा समस्त शिक्षा व्यवस्था उसके चहुँ ओर विचरण करती है। अध्यापक को शिक्षा व्यवस्था का प्राण कहना भी अनुचित नहीं होगा क्योंकि अध्यापक ही शिक्षा व्यवस्था को जीवन्त बनाता है।

विभिन्न शिक्षाविदों के अनुसार शिक्षा व शिक्षक की परिभाषा

1. **महात्मां गाँधीजी के अनुसार**

गाँधी जी अद्वैतवादी थे। गाँधी जी के अनुसार शिक्षक का शिक्षण प्रक्रिया में अत्यन्त महत्वपूर्ण

स्थान है। शिक्षक के बिना शिक्षा प्राप्त नहीं की जा सकती है।

☐ वेतनभोगी व्यक्ति अध्यापन नहीं कर सकता क्योंकि अध्यापन कार्य समर्पण का कार्य है। इसमें आत्मिक सम्बन्धों की आवश्यकता है। आर्थिक सम्बन्धों की नहीं। अतः अध्यापन को वेतन से नहीं जोड़ा जाना चाहिए। गाँधी जी ने लिखा है- अध्यापन का काम कक्षा की अपेक्षा कक्षा के बाहर अधिक है। इस मजदूरी वाली जिन्दगी में जहाँ वेतन के लिए अध्यापक काम करते है। उनके पास कक्षा के बाहर छात्रों को समय देने के लिए अवकाश नहीं है। अतः आज जीवन एवं चरित्र निर्माण सबसे बड़ी यही बाधा है।

☐ शिक्षा का कार्य केवल विषयों का ज्ञान प्रदान करना नहीं उनके मस्तिष्क निर्माण की अपेक्षा छात्रों का हृदय निर्माण चरित्र निर्माण शिक्षक का प्रमुख कार्य है।

☐ शिक्षक का जीवन आदर्श एवं उसका आदर्श चरित्र होना चाहिए। क्योंकि छात्र उसके जीवन से अधिक सीखते है। बजाय उसके भाषणों के।

☐ शिक्षक-गण पुस्तकों के पृष्ठों से चरित्र नहीं सिखा सकते। चरित्र निर्माण तो उनके जीवन से सीखा जाता है।

☐ छात्र को शिक्षक का सम्मान करना चाहिए। उसके प्रति श्रद्धा रखनी चाहिए। गाँधी जी लिखते है,"अपने अध्यापक के प्रति अनादर तथा अपमान का भाव समझ में नही आता। इस प्रकार का आचरण अशिष्टता है औरअशिष्टता हिंसा।"

☐ ज्ञान देने वाला व्यक्ति शिक्षक नहीं हो सकता क्योंकि ज्ञान खरीदी जाने वाली वस्तु नहीं है। ज्ञान तो आत्मिक सम्बन्धों से प्राप्त किया जा सकता है। ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रथमावश्यता है शिक्षक के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास।

☐ शिक्षक को चाहिए कि वह छात्रों को समझे और छात्र को समझना कि बिना आत्मिक सम्बन्धों के सम्भव नहीं है। अतः अध्यापन से पूर्व छात्रों से आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर उनकी रूचियों, आवश्यकताओं एवं क्षमताओं का अध्ययन करना चाहिए और तद्नुरूप ही शिक्षण प्रक्रिया को चलाना चाहिए।

☐ शिक्षण व्यवहार में छात्रों के प्रति असमानता नहीं होनी चाहिए,क्योंकि सभी छात्र आत्मायें है। हॉ उनकी शारीरिक,बौद्धिक,मानसिक भिन्ताओं के अनुसार शिक्षण प्रक्रिया भिन्न अपनाई जा सकती है।

DVSIJMR
ISSN NO 2454-7522

2. **स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा दर्शन**

स्वामी विवेकानन्द जी का मानना है कि ज्ञान व्यक्ति में अन्तनिर्हित है। व्यक्ति इसे खोजता है या इसकी अनुभूति करता है। इसी तरह उनकी मान्यता है कि पूर्णता हम में अन्तनिर्हित है। शिक्षा इसी की अभिव्यक्ति है। प्रत्येक व्यक्ति पूर्णता का अधिकारी है। वस्तुतः प्रत्येक व्यक्ति पूर्णता की प्रक्रिया से गुजर रहा है। षिक्षा सम्बन्धी इन विचारों के प्रकाश में उनके अनुसार शिक्षा को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है- षिक्षा व्यक्ति में पहले से विद्यमान अन्तनिर्हित पूर्णता की अभिव्यक्ति का साधन है माध्यम है उस पूर्णता का प्रकाश है।

स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार शिक्षक- 'स्वामी जी की मान्यता थी कि वस्तुतः शिक्षक ही हो सकता है जो कि शीघ्र छात्र के स्तर पर उतर कर छात्र की आत्मा में अपनी आत्मा को हस्तान्तरित कर दें तथा उसकी आंखों से देखे, उसके कानों से सुने, और उसके मन से समझे, ऐसा शिक्षक की शिक्षण कार्य ठीक कर सकता है।'

शिक्षक को छात्र में आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता के गुणों का विकास करना है। इस दृष्टि से शिक्षक को उसे व्याख्यान न देकर उसका स्वयं सीखने की तरह मार्गदर्शन करना चाहिए। यह सारा कार्य उसे निःस्वार्थ एवं प्यार से करना चाहिए। छात्रों के प्रति स्नेह भाव से ही शिक्षक को समस्त कार्य करने चाहिए।

3. **श्री अरविन्द के अनुसार-**

शिक्षा बालक में अन्तनिर्हित को खोजने एवं विकसित करते की वह स्वाभाविक प्रक्रिया है जिसमें बालक का विकास उसकी प्रकृति के अनुसार किया जाता है। बालक स्वयं सीखता है। विकास करता है। शिक्षक का काम उसे मार्गदर्शन करना है।

अरविन्द जी के अनुसार शिक्षक का प्रथम कार्य है- बालक में छः इन्द्रियों के सही उपयोग की क्षमता का विकास। उसे यह देखना चाहिए कि इनके दुरूपयोग द्वारा इन्हें क्षति न पहुँचाई जाये। शिक्षक के निर्देशन में बालक को इनके उपयुक्त उपयोग के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

प्राचीनकाल में शिक्षक की भूमिका

स्मरणीय है कि यह संकल्पना हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली जैसी मूल संकल्पना ही है। हम अध्यापक शब्द के लिए सामान्यतः आचार्य शब्द का प्रयोग करते है। 'आचार्य'शब्द की व्याख्या इस प्रकार है- संस्कृत में 'चर'शब्द का अर्थ है- गतिशीलता। अतः आचार्य वह है जो गतिशीलता की प्रेरणा दे। यह गतिशीलता मन की है शरीर की नही। आचार्य वह है जो मन को गतिशीलता प्रदान करे। इसी शब्द का एक दूसरा अर्थ भी है। संस्कृत ऐसी भाषा है,जिसके शब्दों तथा संकल्पनाओं में

परिपूरक विचार समाए रहते हैं। वह भी आचार्य है,जो आचरण में सर्वांगपूर्ण हो या सर्वांगपूर्ण चरित्र वाला जिसका आचरण हो अतः हमारी प्राचीन शिक्षा-प्रणालियों मे शिक्षक का बहुत ऊँचा स्थान था। गुरू शिष्य परम्परा में ऐसा ऊँचा स्थान आवश्यक था लेकिन उस ऊँची स्थिति के साथ कठिन दायित्व भी जुड़ गया,क्योंकि यह सुस्थापित सूक्ति थी कि 'शिष्यस्य पाप गुरू व्रजेत्'अर्थात् शिष्य के पापों के लिए गुरू उत्तरदायी होगा।

उपनिषदों में शिक्षक (गुरू) को वेदों का ज्ञाता,ब्रह्मदृष्टा,तपसी एवं आदर्श पुरूष का स्थान दिया गया है। 'मुण्डकोपनिषद्'में शिक्षक के व्यक्तित्व के इन गुणों का वर्णन आता है। इस उपनिषद में उल्लेख है कि ऐसा ब्रह्मनिष्ठ, तपोनिष्ठ, ज्ञानी गुरू ही शिष्य को सत्य मार्ग की ओर प्रेरित करता है। गुरू का स्वयं का जीवन अनुकरणीय होता है। वह शिष्य को दिव्य चक्षु प्रदान करता है। सही मार्ग पर चलाने में समर्थ होता है। ऐसे तपस्वी ऋषि गुरू का स्थान समाज में सर्वोच्च रहा क्योंकि वह महान् गुणों से युक्त एक आदर्श व्यक्ति है। यह गुरू शिष्य को विदाई के समय जीवन में आचरणीय जिस व्यवहार का प्रत्यास्मरण कराता है वह इस प्रकार है-

सत्यंवद। धर्मचर। स्वाध्यान्माप्रमद

दैवपितृकाभ्यां न प्रमदितव्यम्

मातृदेवो भव। पितृ देवोभव। आचार्य देवोभव।

अतिथि देवोभव।

यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितन्यानि नो इतराणि।

अर्थात् सत्य बोलना,धर्माचरण करना अध्ययन करना,आचार्य द्वारा दत्त ज्ञान का आदर करना,उसे बेकार न करना,किसी प्रकार का प्रमाद न करना,अनुशासन रखना,उपासना करना,देवता पिता की ओर लापरवाही न करना,माता-पिता,आचार्य एवं अतिथि की सेवा करना।

गुरू के ये उपदेश कोरे उपदेश नहीं थे- वह स्वयं इनका आचरण करता था इसलिए उसे आचार्य कहा जाता था और आचरण के आदर्श प्रतिरूप के कारण ही उसका समाज में सर्वोच्च स्थान था।

भारतीय शिक्षा के इतिहास को मोटे तौर पर पांच कालखण्डों में विभाजित किया जा सकता है। ये है-(1)वैदिक काल (2)बुद्ध काल (3)मुस्लिम काल (4)ब्रिटिश काल (5)स्वतन्त्रोयत्तर काल। छः सौ ईसा पूर्व (600 ईसा पूर्व) से पहले के समय को वैदिक काल के नाम से पुकारा जाता है। यह समय वेदों की रचना तथा वेदों पर आधारित शिक्षा व्यवस्था का काल है। इस काल के अन्तिम वर्षों में ब्राह्मण,आरण्यक,उपनिषद् आदि ग्रन्थों की रचना भी वेदों के भाष्य के रूप में हुई थी। छः सौ ईसा पूर्व से 1200 ईसवी तक के काल को बुद्ध काल के नाम से पुकारा जाता है। इस काल में बौद्ध धर्म का उद्भव हुआ तथा बौद्ध धर्म के अनुरूप एक नवीन प्रकार की शिक्षा व्यवस्था की गई थी। बारहवीं शताब्दी अर्थात् 1200 ईसवी (1200 ईसवी) से लेकर अट्ठारहवी शताब्दी ईसवी तक की अवधि को मध्यकाल अथवा मुस्लिम काल कहते है। इस काल में भारतवर्ष के ऊपर मुस्लिम शासकों ने शासन किया तथा मुस्लिम संस्कृति के आधार पर दी जाने वाली शिक्षा व्यवस्था का बोलबाला रहा था। 18वीं शताब्दी अर्थात् 1800 ईसवी (1800 ईसवी) से सन् 1947-1947 ईसवी) तक के काल खण्ड को ब्रिटिश काल के नाम से पुकारा जाता है। इस अवधि में भारत का शासन मुख्यतः ब्रिटेन के अधिकार में रहा तथा इस समय में अंग्रेजी भाषा,पाश्चात्य संस्कृति तथा विज्ञान पर आधारित पाश्चात्य प्रणाली की शिक्षा व्यवस्था अंग्रेजों के द्वारा भारतवर्ष में आरोपित की गई। सन् 1947 के बाद के समय को स्वातन्त्रोत्तर काल कहा जाता है। भारत ने सन् 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति की तथा इसके उपरान्त स्वतन्त्र भारत की आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा के क्षेत्र में अनेकानेक परिवर्तन किये गये।

DVSIJMR ISSN NO 2454-7522

प्राचीन काल में गुरू-शिष्य सम्बन्ध-

डॉक्टर अल्तेकर के अनुसार- "छात्र तथा अध्यापक के मध्य सम्बन्ध किसी संस्था के माध्यम से नहीं अपितु सीधे उन्हीं के बीच था। छात्र विद्याध्ययन के लिए उन्हीं लब्ध प्रतिष्ठित गुरूओं के पास जाते थे। विद्वता के कारण जिनकी ख्याति थी।"उस युग में शिष्य गुरू की तन-मन-धन से सेवा करते थे। उनके कर्तव्य इस प्रकार थे- (1.शिष्य के कर्तव्य- भिक्षा मांगना,लकड़ी चुनना,पशु चराना,पानी भरना,अध्ययन करना,आज्ञा पालन करना। यदि छात्र पर निन्दा करते थे उनको दण्ड दिया जाता था।

गुरू के कर्तव्य- अध्यापन,छात्रों के वस्त्र-भोजन आदि की व्यवस्था,चिकित्सा,सेवा शुश्रुषा करना। गुरू भी योग्य छात्र को उत्साहित करते थे एवं अपनी कन्या का विवाह तक उनसे कर देते थे।

प्राचीन काल में अध्यापक का अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा सम्मानित स्थान होता था। गुरूकुल में छात्रों के लिए पारिवारिक वातावरण रहता था तथा गुरू माता-पिता के समान स्नेह,दुलार व पोषण प्रदान करता था। यही कारण था कि उस समय के छात्र अपने गुरू के प्रति विनम्र व आज्ञाकारी होते थे तथा गुरू सेवा करना अपना परम सौभाग्य मानते थे। गुरू शिष्य का पिता-पुत्र जैसा स्नेहपूर्ण सम्बन्ध वैदिक शिक्षा के अतिरिक्त कही अन्य दृष्टिगोचर नहीं होता।

गुरू शिष्य के सम्बन्धों का प्रमुख आधार उनकी योग्यता तथा उनकी व्यवहार कुशलता थी। प्राचीन युग में गुरू की योग्यता थी सर्वांगता तथा विनय,वृहदारण्यक उपनिषद् में गार्गेय राजा अजातशत्रु को उपदेश देते है। उपदेश समाप्त होने पर वह पूछता है कि क्या सब कुछ यही है। ऋषि कहते है- हॉ। राजा कहता है- इसके द्वारा ईश्वर को नहीं माना जाता है। ऋषि कहता है- तब मुझे अपन शिष्य बना लो। कहना यह है कि पूर्णता की आकांक्षा एवं पूर्णता के ज्ञान की खोज में रत् करने वाला ही वास्तविक गुरू होता था। इसी प्रकार परा अपरा विद्या की जानकारी रखने वाला ही

वास्तविक गुरू माना जाता था। उसे शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष तथा निरूक्त का ज्ञान होना आवश्यक था।

'मनु'ने कहा है कि-

अध्यापक का अनिवार्य कर्तव्य है कि वह विद्यार्थी के प्रति अपने कर्तव्य का का निर्वाह करे। वह केवल उन्हें अपने बालक की तरह ही न रखे अपितु उन्हें पवित्र विद्यां को पढ़ाये और कोई भी विद्या उनसे न छिपाये।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्राचीन काल में गुरू का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण व सर्वोपरि था। शिष्य व समाज को एक सही राह दिखाने का महत्वपूर्ण कर्तव्य गुरू का ही था एवं यही कारण है कि प्राचीनकाल के कई गुरूओं के नाम इतिहास में स्वर्णक्षरों में लिखे जाते है क्योंकि वे अपने कर्तव्य का सही निर्वहन करते थे।

वर्तमान सन्दर्भ में 'शिक्षक'की भूमिका

वर्तमान की जड़ें अतीत में विद्यमान होती है। भारत का अतीत गौरवमय रहा है इससे वर्तमान आलोकित हुआ है और भविष्य के प्रति आस्था उपजी है। भारत का अतीत सामाजिकए सांस्कृतिक तथा आर्थिक कारकों से उतना प्रभावित नहीं रहा जितना कि यहाँ की आध्यात्मिकता ने उसे प्रभावित किया है। यहाँ पर मानव का जीवन दर्शन सर्व भूते हिते रता रहा है। यहाँ की संस्कृति ने विश्व-बन्धुत्व तथा अति मानवता का स्वप्न देखा है स्वप्न को साकार किया है। भारत का अतीत गौरवमय बना रहे। इसके लिए वर्तमान को भी सही दिशा देनी होगी और ये सही दिशा समाज को शिक्षक ही दिखायेंगे। अतः शिक्षक को वर्तमान जगत में स्वयं को साबित करना होगा। समाज को एक आदर्श रूप प्रदान करके।

शिक्षा का अध्ययन यदि इतिहास की आँखों से किया जाये तो वर्तमान शिक्षा प्रणाली को दिशा मिल सकती है। हमारी दृष्टि किसी भी शैक्षिक पहलू का अध्ययन करते समय वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए। इतिहास का परिप्रेक्ष्य, शैक्षिक समस्याओं के

अध्ययन के लिए वस्तुनिष्ठता प्रदान करता है। शिक्षा के विकास शिक्षा के वंशक्रम और शिक्षा की संस्कृति का अध्ययन विचार के नये द्वारा खोलता है।

आज जब हमारे देश भारत की साक्षरता दर लगभग 75 प्रतिशत है। (केरल राज्य में अधिकतम लगभग 94 प्रतिशत साक्षरता दर है और बिहार राज्य में न्यूनतम साक्षरता दर लगभग 64 प्रतिशत है) तो स्वाभाविक ही मन में अपने देश भारत में आज के सन्दर्भ में शिक्षक की भूमिका के बारें में विचार उठते है और हम अपने देश एवं विश्व में शिक्षा के सर्वोच्च महत्व के साथ ही शिक्षक के सर्वोच्च महत्व को समझ जाते है। विश्व गुरू के नाम से प्रसिद्ध हमारा देश भारत आज भी शिक्षा के नये आयाम छू रहा है। फिर चाहे वह विद्यालयी शिक्षा हो या महाविद्यालय, विश्वविद्यालय में प्रदान की जाने वाली औपचारिक,अनौपचारिक आधुनिक शिक्षा ही हो.....। शिक्षण में शिक्षक और शिक्षिका की निरंतर बढ़ती और नई ऊचाईया छूती भूमिका को आज कौन नकार सकता है।

भारत की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 के अनुसार,"शिक्षक का स्तर किसी समाज के सामाजिक-सांस्कृतिक लोकाचार को दर्शाता है....."यह भी एक वास्तविकता है कि भारत सरकार द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में अपनाई जाने वाली नीतियां और योजनायें केवल प्रशिक्षित,कुशल,समर्थ और समर्पित शिक्षकों के प्रयास से ही साकार हो सकती है। यदि हम अपने देश को एक विकासशील से विकसित देश बनाना चाहते है तो इसकी पहली शर्त ही 100प्रतिशत साक्षरता दर को प्राप्त करना है और आज हमारे शिक्षक इस दिशा में अपना पुरजोर योगदान दे रहे हैं।

हमारे शिक्षक ही एक सुदृढ़ और विकासशील देश को मजबूत नींव है। बच्चों के माता-पिता के अलावा शिक्षक ही बच्चों के ज्ञान और जीवन मूल्यों का मुख्य आधार है। किसी भी बच्चे/छात्र और समाज का भविष्य शिक्षकों के हाथ में पूरी तरह सुरक्षित होता है। इसलिए शिक्षकों को राष्ट्र का निर्माता कहा जाता है।

तीन वर्ष में ही बालक 'प्ले स्कूल'में एडमिशन लेते ही अपने शिक्षक से जुड़ जाते है और यह सफर ग्रेजुएशन/पोस्ट ग्रेजुएशन/एमफिल और पी0एच-डी0 तक की डिग्री पाने तक चलता है। इतना ही नहीं अगर किसी छात्र/छात्रा को प्रोफेशनल ट्रेनिंग चाहिए या नई नौकरी मिलने पर किसी कर्मचारी ऑफिसर को ट्रेनिंग की आवश्यकता है तो वह ट्रेनिंग भी किसी प्रोफेशनल इंस्ट्रक्टर अर्थात् शिक्षक द्वारा ही दी जाती है। ऐसे में बालपन में व्यस्क होने तक छात्र/छात्राओं के व्यक्तित्व पर अपने शिक्षकों का प्रभाव साफ दिखाई देता है। इसलिए यह एक वास्तविकता है कि शिक्षक का दायित्व केवल क्लासरूम तक ही नहीं सिमटता बलिक यह दायित्व बालकों/छात्रों के व्यक्तित्व के विकास और चरित्र निर्माण का भी एक अहम् हिस्सा होता है।

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षको व्यवसाय का ऐसा ही महत्व है जैसे कि ऑपरेशन करने के लिए किसी डॉक्टर का महत्व। शिक्षक ही शिक्षा और शिष्य के उद्देश्य पूरे करते है। इसलिए किसी भी शिक्षा प्रणाली या शिक्षा योजना की सफलता या असफलता शिक्षा क्षेत्र के सूत्रधार शिक्षकों के रवैये पर निर्भर करती है। भारत सरकार द्वारा लागू की गयी सभी शिक्षा नीतियों/योजनाओं- कोठारी आयोग की रिपोर्ट (1964-66),शिक्षा नीति (1968),शिक्षा पर पंचवर्षीय योजना की रिपोर्ट और नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986),में शिक्षक के व्यवसाय के महत्व की पहचान की गई है। इस तथ्य को और स्पष्ट करने के लिए प्राथमिक स्कूल के शिक्षण व्यवसाय का उदाहरण दिया जा सकता है जिसे विश्व में सबसे महत्वपूर्ण व्यवसाय माना गया है क्योंकि प्राथमिक स्कूल के शिक्षक छोटे बच्चों को ज्ञान और जीवन के मूल्य उन्हें समझ आने लायक भाषा में प्रदान करते है ताकि इन छोटे बच्चों का भविष्य सुरक्षित और सुनहरा बन सके। अब क्योंकि आज के बच्चे कल देश का सुनहरा भविष्य है तो बच्चों को आज अच्छी शिक्षा देने का अर्थ कल देश के सुनहरे भविष्य का निर्माण करना और इस कार्य में प्राथमिक स्कूल के शिक्षक निरंतर सकारात्मक भूमिका निभाते है।

आगे चर्चा करें तो इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है कि प्राथमिक स्कूल के बाद माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्कूल भी छात्र/छात्राओं के व्यक्तित्व निर्माण में अहम भूमिका निभाते है और जब हम किसी स्कूल की बात करते हैं तो वास्तव में उसे स्कूल में पढ़ने वाले सभी छात्र-छात्राओं को अर्थपूर्ण शिक्षा प्रदान करते हैं। जब अच्छी शिक्षा देने की बात आती है तो विद्यालय, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय में पढ़ाने वाले सभी शिक्षक इसके प्रणेता नजर आते है। शिक्षा,शिक्षक और शिष्य के आत्मीय और निकटतम सम्बन्ध को कभी तोड़ा नहीं जा सकता है। आज भले ही आधुनिक युग में शिक्षा का स्वरूप दिन-ब-दिन बदलता जा रहा है और दूरस्थ शिक्षा प्रणाली जैसे इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय तथा इंटरनेट पर अत्यधिक शिक्षण वेब पोर्टल होने के बावजूद भी "क्लासरूम शिक्षा और शिक्षक का महत्व" सर्वोच्च मुकाम पर है।

आज के इस आधुनिक इंटरनेट युग में शिक्षक की भूमिका भी बहुआयामी हो गई है। आज शिक्षक अपने विद्यालय में शिक्षा देने के साथ ही इंटरनेट के माध्यम से भी शिक्षा प्रदान कर रहे है और इस प्रकार की शिक्षा में शिक्षक का अपने छात्रों से सीधा सम्पर्क नहीं होता है। वे अपने कोर्स या विषय की शिक्षा देते समय ही अपने छात्रों की संभावित शंकाओं और प्रश्नों का समाधान भी कर देते है। विशेष रूप से उच्च और उच्चतम शिक्षा हेतु इंटरनेट शिक्षण का अपना ही महत्व है और इसके साथ ही शिक्षक की भूमिका भी अपने क्लासरूम से निकलकर जिला, प्रान्त, राज्य, राष्ट्र और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक विस्तारित हो जाती है और यह भी सच है कि आधुनिक शिक्षक अपनी यह बहुआयामी भूमिका बखूबी निभा रहे हैं। अंततः यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि वर्तमान युग में शिक्षक छात्र/छात्राओं के सक्षम मार्गदर्शक होने के साथ ही देश के भाग्य विधाता भविष्य निर्माता भी है।

अब यह प्रश्न उठता है कि एक शिक्षक का व्यवसाय चुन कर हम कैसे अपने समाज और देश की सेवा कर सकते है।

स्वाभाविक रूप से निजी या प्राइवेट स्कूल में शिक्षक की नौकरी करने से कही बेहतर किसी सरकारी विद्यालय महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में शिक्षक की नौकरी करना है जिसमें आर्थिक सुरक्षा के साथ ही समाज में सम्मान और सेवानिवृत्ति के बाद पेंशन सहित अन्य कई लाभ प्राप्त होते है तो इसके लिए हम यह स्पष्ट कर दें कि हमारे देश भारत में सभी राज्यों और केन्द्रीय स्तर पर स्थापित प्राथमिक माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्कूलों के साथ ही महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में शिक्षकों की नियुक्ति के लिए विभिन्न राज्य सरकारें और केन्द्र सरकार प्रत्येक वर्ष स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय के शिक्षकों के रिक्त पदों को भरने के लिए समय-समय पर रोजगार अधिसूचनायें जारी करती रहती है और शिक्षक की नौकरी हेतु पात्रता मानदंड पूरे करने वाले सभी पुरूष और महिला उम्मीदवार शिक्षकों हेतु नवीनतम नौकरियों की समय रहते जानकारी वेब पोर्टल से प्राप्त कर सकते है। महिलाओं के लिए वर्तमान सन्दर्भ में शिक्षक का व्यवसाय सर्वोत्तम है एवं सही मापदण्ड में महिलायें बालक के लिए जन्म से ही एक कुशल शिक्षिका के रूप में मानी जाती हैं।

शिक्षक की भूमिका के सन्दर्भ में भविष्य की चुनौतियाँ

DVSIJMR ISSN NO 2454-7522

भारत जैसे महान विकासोन्मुख देश के लिए यह अत्यन्त गम्भीर प्रश्न है कि हम उसके उत्थान हेतु राष्ट्र को सही मार्गदर्शन कैसे दें युवा क्षमता का किस प्रकार उपयोग करे। यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि किसी देश का युवा वर्ग ही उसकी रीढ़ की हड्डी होता है जिस पर राष्ट्र का वर्तमान तथा भविष्य टिका होता है एवं युवाओं के भविष्य को सही दिशा देने हेतु एक सही मार्गदर्शक, शिक्षक की आवश्यकता होती है। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में युवाशक्ति ने जो भूमिका निभाई उसका वर्णन सदा स्वर्णाक्षरों में किया जायेग। अतः ऐसे महत्वपूर्ण युवा वर्ग को सुदृढ़ एवं उन्त बनाना राष्ट्र के शिक्षकों के लिए कए चुनौती है।

जनवरी सन् 1985 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी जी ने घोषणा की थी कि राष्ट्र के लिए एक नई शिक्षा नीति तैयार की जायेगी। नई राष्ट्रीय षिक्षा नीति के निर्माण से पूर्व भारत सरकार ने अगस्त 1985 में शिक्षाकी चुनौती: नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य **(Challenge of Education : A Policy Perspective)**नामक 68 पृष्ठीय दस्तावेज तैयार किया जिसमें तत्कालीन शिक्षा की कमियों की ओर संकेत करते हुए भावी नीति के सम्बन्ध में विचार प्रस्तुत किये गये थे। वस्तुतः यह दस्तावेज नई शिक्षा नीति के निर्माण की दिशा में एक आधार पत्र था तथा इसे भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर पुनर्विचार करने तथा उसे नया रूप देने की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण कदम माना जा सकता है। इसमें शिक्षा व्यवस्था को भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के अनुरूप बनाने की दृष्टि से किये गये विश्लेषणों तथा विचारों के द्वारा अनेक महत्वपूर्ण निष्कर्षों पर पहुँचा गया है। इस दस्तावेज का एक उद्देश्य शिक्षा नीति के प्रारूप पर राष्ट्रव्यापी विचार-विनिमय भी है जिससे शिक्षा नीति को अन्तिम रूप देने में सहायता मिल सके। तत्कालीन शिक्षा मन्त्री श्री कृष्ण चन्द्र पंत ने अपने प्राक्कथन में स्पष्ट किया है कि शिक्षा का सम्बन्ध भविष्य से होता है और इसका स्वरूप सर्वांगीण होना आवष्यक है। इसलिए इसमें योगदान करने वाले हर व्यक्ति का यह दायित्व है कि वह शिक्षा को इस परिप्रेक्ष्य में देखे। यदि इक्कसवी शताब्दी में प्रवेश करने वाली नई पीढ़ी अपने आपको नई शताब्दी के लिए ठीक तरह से समर्थ नहीं पाती है तो वह निश्चय ही आज की पीढ़ी को इसके लिए जिम्मेदार ठहरायेगी। वह इस बहाने को कतई स्वीकार नहीं करेगी कि उनके शिक्षण प्रशिक्षण में जो दोष रह गये है वे केन्द्र और राज्यों के सम्बन्धों के विशेष ढांचे के कारण थे या प्रशासकीय कमियों के कारण पैदा हुए थे। शिक्षा एक राष्ट्रीय उत्तरदायित्व है।

महान् वैज्ञानिक अल्बर्ट आंइसटीन ने कहा था कि- कल्पना ज्ञान से भी ज्यादा शक्तिशालीहै,इंसानों ने अपने मन की कल्पनाओं को साकार करने की प्राक्रिया में तमाम अविष्कार किए और खूबसूरत चीजों का निर्माण किया। साइकिल जैसी

अनोखी चीज का अविष्कार मैकमिलन ने किया। जबकि बल्ब का अविष्कार एडिषन ने किया।

एक सहज सा सवाल मन में आता है कि उन्होंने यह अविष्कार क्यों किए,शायद मैकमिलन लोगों से रफ्तार को बढ़ाना चाहते थे। वे मशीन के माध्यम से रफ्तार को इंसानी जिन्दगी का हिस्सा बनाना चाहते थे। जबकि एडिशन लोगों की जिंदगी में रोशनी लाना चाहते थे। अपने अविष्कार की सफलता तक पहुँचने के लिए उन्होंने सैकड़ों असफल प्रयोग किए, लेकिन हार नहीं मानी। वे अंततः दुनिया को रोशनी देने में कामयाब हुए।

हमारे समाज में शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण है ये किसी वैज्ञानिक कलाकार और रचनाकार से कम नहीं है। वे दुनिया को बेहतर बनाने में अपना योगदान शिक्षा की रोशनी फैलाकर कर रहे है। विशेषकर हमारे देश के सरकारी स्कूलों में हजारों बच्चे ऐसे है जिनके घर में पहले कभी कोई स्कूल नहीं गया। हो सकता है कि इनके माता-पिता स्कूल जाने से डरते रहे हो। उनके पास स्कूल की फीस देने को पैसे न रहे हों। मजदूरी और अन्य पारिवारिक कारणों से आगे की पढ़ाई न कर पाएं हो। मगर अभी तो उनके बच्चों को शिक्षा का अधिकार अधिनिमय कानून के तहत पढ़ने का मौका मिल रहा है इसलिए वे स्कूल आ रहे है।

DVSIJMR ISSN NO 2454-7522

अध्यापक ऐसे बच्चों के जीवन में शिक्षा के माध्यम से बदलाव का बीजारोपण कर रहे हैं। स्कूलों में आने वाले बच्चे एक नन्हें-नन्हें से बीज हैं जो एक दिन बड़े होकर अपने आस-पास के लोगों को छाया और फल देंगे। हमारे देश के प्रख्यात वैज्ञानिक और मिसाईल मैन डॉक्टर अब्दुल कलाम ने अपने देश को लेकर एक सपना देखा था जिसे विजन 2020 के नाम से जाना जाता है। उनका सपना है कि 2020 तक भारत विकसित देश बने। हर बच्चा स्कूल जाये। पढ़ाई करने वाले नवयुवकों के हाथ में रोजगार हो जो रोजगार से वंचित रह गए है वे स्वरोजगार का रास्त चुने। अपने

गाँव और शहर में काम करें। सारे लोग मिलकर देश के सकारात्मक विकास में अपना योगदान दें-

1. आज के शिक्षक को चाहिए कि आने वाले भविष्य में देश को एक कुशल व सही मार्गदर्शन प्रदान करें।
2. आज के नवयुवकों को शिक्षक को आचरण की शिक्षा देना जरूरी स्तम्भ है।
3. अध्यापक से यह भी अपेक्षा की जायेगी कि वह खुद अपना चरित्र व आचरण को स्वच्छ रखे क्योंकि छात्र उनके चरित्र को आदर्श मान कर चलते है।
4. इक्कीसवी सदी में जाते-जाते हम अपने मूल्यों को खोते जा रहे हैं। अतः शिक्षक से यह भी उम्मीद की जायेगी कि वह बच्चों को मूल्यों पर आधारित शिक्षा प्रदान करे।
5. आज के शिक्षक को चाहिए कि उसका छात्र पढ़ाई को मात्र पास करने तक सीमित न रहे परन्तु उस शिक्षा को अपने जीवन में उतारे।

किसी भी अध्यापक से यह अपेक्षा की जाती है कि वह उन बालकों को अच्छी तरह समझता हो जिन्हें वह पढ़ा रहा है। शिक्षा को बाल केन्द्रित मानने के कारण यह आवश्यक है कि अध्यापक पाठ्यवस्तु के साथ-साथ बालकों की प्रकृति को अच्छी तरह से समझे। विभिन्न आयु वर्गों के बालकों में विकास व वृद्धि किस प्रकार से होती है। बालकों की आवश्यकतायें क्या है बालक किस प्रकार से सीखते है बालकों को सीखने के लिए प्रोत्साहित कैसे किया जा सकता है बालकों में वांछित अभिवृत्ति व मूल्य कैसे विकसित किये जा सकते है। बालकों के संवेगों को कैसे नियन्त्रित परिवर्तित व संशोधित किया जा सकता है बालकों में हीन ग्रन्थियों के विकास पर कैसे अंकुश लगाया जा सकता है,यही सब चुनौतियाँ आज के शिक्षक के लिए एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है जिससे वह शिक्षण व्यवसाय को ईमानदारी से निभा सके।

DVSIJMR ISSN NO 2454-7522

उपसंहार

इस प्रकार संस्कृत का यह सुभाषित "मातृवत परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्" भी एक बड़ा भारी पथ प्रदर्शक है। आज के नव युवा शिक्षकों के सामने यह उभरकर आ रहा है कि वे इक्कीसवी सदी में क्या भूमिका निभायेंगे। वैदिक आदर्श के सामने सबसे ऊपर उन्हें पितृ ऋण, ऋषि ऋण, देव ऋण से उऋण होना है। पितृ ऋण से उऋण होने के खातिर ही तो भगीरथ ने प्रचण्ड तपस्या करके गंगा को शिव की जटा से मुक्त कराया था। आज देश को ऐसे समर्थ, सशक्त, संकल्पमय शिक्षकों की आवश्यकता है जो ऐसे नवयुवक तैयार करे। शिक्षकों का पहला कार्य भागीरथ जैसे व्यक्तित्व पैदा करना है। तत्पश्चात् भगीरथ की तरह देश की समस्याओं से जूझने का है। तभी तो देश में सुख-शान्ति की गंगा का अवतरण होगा। देव ऋण से अर्थ है अपनी शक्तियों का स्वस्थ विकास करना और सबके हित में अपना हित समझना। जब यह भावना पैदान जो जाये तो फिर जीवन में लड़ाई-झगड़ा,अभ्यास तथा लोलुपता का स्थान रहता ही नहीं। मन, वाणी और कर्म पर स्वतः संयम होने लगता है, और जीवन में माधुर्य आता है। ऋषि ऋण से अर्थ है वेद, वेदान्त का अध्ययन और ब्रह्मण्ड के रहस्य का उद्घाटन, प्रहलाद की भाति सत्य मार्ग का अनुसरण, ध्रुव की भांति शाश्वत वीप्ति की प्राप्ति।इसलिए हम सबको सोचना होगा कि आगे आने वाले समय की हमारी क्या तैयारी है, आने वाले समय की क्या चुनौतियाँ होगी। आने वाले समय में कौन से नये सवाल उभरेंगे उनका जवाब हम कैसे खाजेंगे। उक्त परिस्थितियों का सामना हम कैसे कर रहे होंगे आदि सवालों के लिए हमें अभी से तैयार रहना होगा। शिक्षकों और प्रधानाध्यापकों को बच्चों के बेहतर भविष्य का उनको शिक्षा के क्षेत्र को उन्ति के मार्ग पर ले जाने का सपना देखना होगा। अगर हम उदास-हताश और निराश बैठे रहेंगे तो आगे आने वाली पीढ़ी हमसे पूछने वाली है कि हमने उनके लिए क्या-क्या किया, अतः आज के शिक्षकों को चाहिए कि वह अपना शिक्षण कार्य को पूरी ईमानदारी से करें व राष्ट्र के विकास में अपना सही

योगदान देने के लिए एक कुशल नेतृत्व व दिशा प्रदान करें जिससे शिक्षक राष्ट्र का निर्माता होता है उक्त बात को कहने में राष्ट्र के किसी भी नागरिक को संकोच न हो। देश को गतिशीलता प्रदान करें। देश को गतिशीलता प्रदान करें। राष्ट्र के हित में सहयोग दे जिससे भारत विश्व पटल पर आने वाली पीढ़ियों तक विश्व गुरू ही कहलाए। यही सही मायने में एक शिक्षक की यर्थाथ भूमिका होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- शर्मा,डॉ0 शंकर दयाल,शिक्षा के आयाम,प्रभात प्रकाशन,दिल्ली-6, 1995,प्रथम संस्करण।
- हूजा,बलभद्र कुमार,शिक्षा,मूल्य और समाज,यूनाईटिड बुक प्रकाशन हाउस,दिल्ली,चांदनी चौक,प्रथम संस्करण, 1985।
- मलैया,विद्यावती,शिक्षा सिद्धान्त और दर्शन,राधाकृष्ण प्रकाशन अंसारी रोड़,दरियागंज,दिल्ली, 1968 जबलपुर।
- गुप्ता,एस0पी0,भारतीय शिक्षा का इतिहास,विकास एवं समस्यायें,शारदा पुस्तक भवन, 11,यूनिवर्सिटी रोड़,इलाहाबाद,संस्करण 2007।
- शर्मा,डी0एल0,उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक,आर0 लाल बुक डिपो,मेरठ,संस्करण 2008।
- भटनागर,सुरेश,आधुनिक भारतीय शिक्षा और उसकी समस्यायें,आर0 लाल बुक डिपो,मेरठ,संस्करण 2007।
- कबीर,हूमायूँ,स्वतन्त्र भारत में शिक्षा,प्रकाशन राजपाल एण्ड सन्स,दिल्ली।
- हायेट,गिलबर्ट,पढ़ाने की कला,प्रकाशन- आत्माराम एण्ड सन्स,कशमीरी गेट,दिल्ली-6,प्रथम संस्करण-1958।
- टेलर,हैराल्ड,सम्पादक: शिक्षण की समस्याएं,विख्यात आधुनिक शिक्षाविदों के विचार),प्रकाशन- राजपाल एण्ड सन्स,दिल्ली-6ए संस्करण 1950।
- त्रिवेदी,काशीनाथ नारायण,विद्यार्थी और शिक्षक,प्रकाशक- काशीनाथ नारायण त्रिवेदी 57,कृष्णापुरा,इन्दौर,सन्-1932।
- पचौरी,डॉ0 गिरीश,शिक्षा के सामाजिक आधार,प्रकाशन आर0 लाल बुक डिपो,मेरठ,संस्करण 2014।
- गुप्ता,महावीर प्रसाद,गुप्ता,ममता,शैक्षिक निर्देशन एवं परामर्श,राखी प्रकाशन,6-9,संजय प्लेस हाउसिंग सोसाइटी,आगरा,प्रथम संस्करण, 2005।
- Http://www.hindikunj.com/2016/05,भारतीय समाज में शिक्षकों की भूमिका,मिश्रा,शुभ्रता।
- Http://educationmiror.org>2013/03/10,शिक्षकों की भूमिका: भविष्य की तैयारी है जरूरी,मैं शिक्षक हूँ। 2013/03/10